ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.18, NO.1, JAN-JUNE,2023 /43

दिक्पाल, आठ दिशाओं के स्वामी

– डॉ0 ज्योति पाण्डेय
असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास
अवध राज सिंह स्मारक महाविद्यालय, विशुनपुर बैरिया, सालपुर ,गोण्डा

इस शोध पत्र में दिशाओं के महत्व एवं उनके दिक्पाल के बारे में बताया गया है। ये दिक्पाल हैं–इन्द्र, अग्नि, यम, नैऋत्य, वरूण, बायव्य, कुबेर, ऐशान्य। इन सभी दिक्पालों के कार्य, आयुध, इनकी बनावट जो कि प्रतिमा निर्माण के लिये आवश्यक है इसका वर्णन है।दिशायें हमारे जीवन का अभिन्न अंग हैं। हम कितना भी आधुनिक होंपरन्तु यदि दिशाओं का सही ज्ञान न हो तो हम भटक सकते हैं। परन्तु ज्ञान की बात करें तो स्वामी का भी वर्णन अत्यन्त आवश्यक है। हमारे हिन्दू धर्म में दिशाओं का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। प्राचीन काल में जब घड़ियाँ नही थीं तो दिशाओं के द्वारा ही समय का ज्ञान होता था। यदि ऊपर–नीचे की दिशाओं को छोड़ दिया जाय तो कुल दिशाओं की संख्या आठ होती हैं। इन आठ दिशाओं के निम्नलिखित दिक्पाल माने गये हैंः–

पूर्व– इन्द्र	आग्नेय (दक्षिण–पूर्व)–अग्नि
दक्षिण–यम	नैऋत्य (दक्षिण–पश्चिम)–निर्ऋति
पश्चिम–वरूण	बायव्य (उत्तर–पूर्व) वायु
उत्तर– कुबेर	ऐशान्य (उत्तर–पूर्व) ईश, ईश्वर

प्राचीन परम्पराओं में इन दिक्पालों के नाम और संख्या में भेद है। जैन शास्त्रों के दशदिक्पाल थोड़े भिन्न हैं। इनमें इन्द्र, यम,अग्नि और वरूण प्राचीनतम् हैं।

बौद्धों ने दिशाओं के अधिपतियों के रूप में चतुर्महाराजों को इस प्रकार माना है :– पूर्व की ओर धृतराष्ट्र, दक्षिण की ओर विरूढ़क, पश्चिम की ओर विरूपाक्ष और उत्तर की ओर वैश्रवण।

दिक्पालों की प्रत्यक्ष प्रतिमायें इस प्रकार हैं।

इन्द्र–वैदिक देवता संघ में इन्द्र का स्थान सबसे ऊँचा था, पर पौराणिक काल में स्थिति बदल गई। इन्द्र को सोम, विश्व पुरूष एवं प्रजापति से उद्भूत माना जाता है, इनके मुख्य आयुध वज्र और अंकुश हैं। कथा है कि वृत्र नामक असुर का वध करने के लिए दधीचि ऋषि की अस्थियों से वज्र का निमार्ण हुआ था। गान्धार–कलाकृतियों में बौद्ध शक्र के हाथ में दिखलाई पड़ने वाला वज्र कभी–कभी अस्थि के आकार का होता है जो कदाचित इस परम्परा की ओर संकेत है। प्रारम्भिक मूर्तियों में मानव–रूप में दिखलाई पड़ने वाले इन्द्र की पहचान उसके ऊँचे उष्णीष या मुकुट, हाथ में वज्र तथा ऐरावत हाथी से होती है।

अपने पद के प्रति सदैव जागरूक रहने वाले इन्द्र का मुख्य कार्य वर्षा कराना है। किसी समय इन्द्र का बहुत अधिक प्रचार था।[1]परन्तु कृष्ण की लोकप्रियता ने उसे समाप्त कर दिया। इन्द्र की पत्नी का नाम शची है। विष्णु धर्मोत्तरपुराण में शची के साथ आलिंगन मुद्रा में इन्द्र की प्रतिमा बनाने का विधान है।[2]

दक्षिण भारत में इन्द्र का प्राचीनतम् अंकन भाजा की गुफा में मिलता है।[3]एलोरा की इन्द्रसभा गुफा की गजारूढ़ इन्द्र की प्रतिमा गुप्तोत्तर काल की है।[4]

अग्नि–वैदिक देवताओं मे इन्द्र के बाद अग्नि का स्थान है। देवताओं को आहुतियों के रूप में अग्नि के माध्यम से ही उनके भाग की प्राप्ति होती है। अग्नि के जिस स्वरूप की कल्पना की गई है उसके

अनुसार उसे सात हाथ, चार सींग, सात जिव्हाएँ, दो मस्तक और तीन पैर हैं। उसके हाथों में शक्ति, अन्न श्रुक, श्रुवा, तोमर, पंखा तथा घृतपात्र की कल्पना की

गई है। उसकी दाहिनी ओर स्वाहा तथा बाईं ओर स्वधा नामक देवियों की स्थिति है।[5] ऐसा केवल अनुमान है। इसी आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह रूपक है मूर्ति लक्षण नहीं : क्योंकि लक्षण ग्रन्थों में दिये गये वर्णन तथा अधिकतर प्रतिमाएँ उसे मेल नहीं खातीं।

अग्नि की प्रतिमाएँ कुषाणकाल से ही मिलने लगती हैं। लखनऊ (सं0सं0जे0123) तथा मथुरा(सं0सं0 40,2880) के संग्रहालयों में इस कालके नमूने हैं। यहाँ अग्नि को विशुद्ध मानव–रूप में तुन्दिल ब्राह्मण के समान अंकित किया गया है। उसके मस्तक पर जटाएँ बँधी हैं, कँधे पर जनेऊ है और हाथ में कमण्डलु है, पर मुख्य पहचान पृष्ठशिला पर दिखलाई पड़ने वाली ज्वालाएँ हैं।

महाभारत के खिलपर्व हरिवंश में नारद की अग्नि से तुलना करते हुऐ कुछ ऐसे विशेषज्ञों का प्रयोग किया गया है, जो कुषाणकालीन अग्नि–प्रतिमा की विशेषतायें भी लगती हैं।[6]इनमे मस्तक पर केशों की बाईं ओर बड़ी–सी गाँठ रखने वाला (सव्यापवृत विपुल जटामण्डल), उगते सूर्य के समान आँखो वाला (बालार्क सदृशेक्षणः) तथा जलने वाला (ज्वलित) के पद मुख्य हैं।

हम जानते है कि अग्नि का कुमार स्कन्द से भी निकट सम्बन्ध था। कदाचित् इसीलिए कुषाण काल से ही इन दोनों को कभी–कभी एकत्र ही अंकित करते थे।

यम–ये भी वैदिक देवता हैं। ये विवस्वान सूर्य के पुत्र तथा यमी–कदाचित् पुराणों की यमुना–के भाई हैं। सबसे प्रथम स्वयं मरकर दूसरों को मृत्यु का रास्ता दिखलाने वाले यमधर्म के प्रतीक माने गये हैं।

यमकि कुषाणकालीन प्रतिमाएँ अब तक अज्ञात हैं। विष्णु धर्मोत्तर पुराण के अनुसार दण्ड, खड्ग ,त्रिशूल तथा अक्षमाला यम के हाथों में होना चाहिए।[7]

निर्ऋति–राक्षस कुल के इस दिक्पाल का नामोल्लेख ऋग्वेद मे मिलता है। आगे चलकर विष्णु धर्मोत्तर पुराण में इसकी प्रतिमा का विधान दिया गया है।[8]पर गुप्तकाल तक की इसकी प्रत्यक्ष प्रतिमाओं की कोई जानकारी नही है।

वरूण– वैदिक देवता–संघ में इन्द्र, अग्नि व वरूण– ये तीन देवता प्रसिद्ध रहे। पर पौराणिक काल में इन्द्र के समान वरूण की स्थिति भी अवनत हुई । अब उसकी मान्यता पश्चिम दिशा केअधिपति के रूप में ही रह गई। वरूण पूजकों के किसी सम्प्रदाय का हमे ज्ञान नहींहै। अब उसका पूजन विशेष रूप में कर्मकाण्ड तक ही सीमित है।

वरूण का मुख्य आयुध पाश तथा वाहन मकर है। विष्णु धर्मोत्तर पुराण के अनुसार वरूण किंचित स्थूल तथा मोतियों के अलंकारों से मण्डित अंकित किये गये हैं। वरूण की कुषाणकाल अथवा उसके पहले की किसी प्रतिमा की अब तक प्राप्ति नहीं हुई है। गुप्त काल की भी स्थिति लगभग वैसी ही है। वरूण कीसपत्नीक प्रतिमाएँ भी ज्ञात हैं।

वायु–मानव जीवन के लिए अनिवार्य आवश्यक वायु का मूर्ति विज्ञान के क्षेत्र में कोई खास स्थान नही है और न वायुदेव के किसी मन्दिर का ही पता है। कुषाण–काल में कदाचित् उसे इस क्षेत्र में छोटा–मोटा स्थान मिला था ; क्योंकि इन शासकों कि मुद्राओं पर **'ओएडो'** के नाम से हमें वायु–देव के दर्शन होते हैं। वहाँ उसका मुख उग्र है, केश खड़े हैं तथा वह दौडता हुआ दिखाई पड़ता है। वायु का यह चित्रण हरिवंश में किये गये उसके वर्णन से साम्य रखता है, जहाँ उसे **'उत्तमभूत'** , **'अशरीरी'**, **'शीघ्रग'**आदि नामों से पुकारा गया है।[10]

कुबेर–साधारणतया उत्तर दिशा के अधिपति के रूप में कुबेर को गिनाया गया है पर दूसरी परम्परा के अनुसार यह स्थान सोम का है। कुबेर को धनपति,धनद, वैश्रवण, अलकापति आदि अनेक नामों से पहचाना जाता है। पुलस्त्य ऋषि का पौत्र व विश्रवा का पुत्र वैश्रवण कुबेर मूलतः राक्षस

है। शिव की मित्रता–सम्पादन करने के कारण इसे उत्तर दिशा का अधिपत्य, यक्षों पर अधिकार आदि बातें मिलीं।

'कुबेर' शब्द का अर्थ है निम्न या भोंड़ा शरीर वाला, कदाचित् इसी कारण से प्रतिमा–विधान में उसे थुलथुले शरीर वाला व धनपति एवं यक्ष स्वामी होने के कारण थैली लिए भरे–पूरे सेठ के रूप में दिखलाते हैं।[11] वाल्मीकीय रामायण में उसे **'एकाक्ष'** भी कहा गया है।[12]पर मूर्तियों में उसकी यह विशेषता नही दिखाई पड़ती है।

कुबेर की उपासना और उसके मन्दिर शुंगवंशी पुष्यमित्र के आचार्य भाष्यकार पतञ्जलि के समय से अर्थात् कुषाणों के पहले से ही विद्यमान थे।[13]'ललित–विस्तर' की सूची में पूजनीय देवताओं के अन्तर्गत कुबेर (वैश्रवण) की गणना है। कुषाणकाल में उनकी प्रतिमाएँ भी अच्छी मात्रा में मिलती हैं। उनके आधार पर कुषाणकालीन कुबेर की निम्नांकित विशेषतायें स्थिर की जा सकता हैं –

(1) थुलथुला शरीर ,माथे पर उष्णीष, कानों में कुण्डल ,गले में कण्ठा रहता है।

(2) दाहिना हाथ अभय मुद्रा, बायें हाथ में नेवले के आकार की धन की थैली, जिसे नकुली कहते हैं।

(3) कुबेर की पत्नी का नाम भद्रा है, बौद्धों के यहाँ वह हारीती के नाम से जानी जाती हैं, प्रतिमाओं में बच्चों को लिये कुबेर के साथ कमलधारिणी भद्रा के दर्शन होते हैं।

(4) कुषाण काल में कुबेर के साथ देवी लक्ष्मी का अंकन हुआ है। लक्ष्मी के पास कमल तथा भद्रा के हाथ में मद्य–पात्र है।

(5) इस प्रतिमा में हम कुबेर को संगीत का आनन्द लेते हुये पाते हैं।

गुप्तकाल में कुबेर की प्रतिमाओं की संख्या एवं उनकी लोकप्रियता में कमी आ गई। लेकिन जो भी एकाकी या सपत्नीक मूर्तियाँ मिलीं उनका मूल श्रोत कुषाण कला में निहित है।

ईशान–यह उत्तर पूर्व का संरक्षक है। वह शिव का एक रूप है, जिसे
उनके पाँच पहलुओं में से एक माना जाता है। उन्हे शिव के समान तरीके से चित्रित किया जाता है, सिवाय इसके कि उनका कम से कम एक हाथ वरद मुद्रा या परोपकारी मुद्रा में है।

अष्ट दिक्पाल आठ दिशाओं के संरक्षक, उनकी दिशाओं के
अनुरूप मंदिरों की दीवारों पर रखे जाते हैं। इस प्रकार इन्द्र को मंदिर की पूर्वी दीवार पर, अग्नि को दक्षिण पूर्व की दीवार पर या दक्षिण पूर्व कोने पर और इसी तरह उस दिशा सामना करते हुऐ देखा जाता है जिसका वे प्रतिनिधित्व करते हैं।[12]

प्रत्येक मंदिर अष्ट दिक्पालों द्वारा संरक्षित है। खजुराहो के मंदिरों में मूर्तिकारों द्वारा अष्ट दिक्पालों को अंदर और बाहर दोनों ओर से दीवारों पर उकेरने में सावधानी बरती गई है। वे न केवल मंदिर की रक्षा करते हैं बल्कि हमारी भी रक्षा करते हैं। उन्हे विभिन्न आलों में बैठे हुए और साथ ही खड़े हुए दिखाया गया है।

इस प्रकार से अष्ट दिक्पाल हमारी सांस्कृतिक परम्परा से सम्बन्धित हैं जिसका प्रभाव हमारे जीवन पर पड़ता है । इन्द्र को पूर्व का संरक्षक एवं सबसे महत्वपूर्ण देवता माना गया है।[13]

सूर्योदय होने के कारण पूर्व दिशा को एक शुभ दिशा माना जाता है।[14] इन्द्र बारिश के देवता हैं। अग्नि दक्षिण पूर्व के देवता हैं। अग्नि द्वारा देवता प्रसाद ग्रहण करते हैं।[15] यम मृत्यु के देवता एवं दक्षिण दिशा के संरक्षक हैं।[16]

नृति नैऋत्य कोण की संरक्षक हैं। नृति नाम " न–आरती या नियमों के अभाव से आया है। इस प्रकार नृति जंगली कहा गया है।[17] विकीपीडिया के अनुसार– नृति एक देवी है जबकि नृत्त रूद्र या शिव के रूपों में से एक है। वायु उत्तर पश्चिम के संरक्षक देव हैं, वाहन मृग

है।[18] धन के देवता कुबेर हैं जो उत्तर दिशा के संरक्षक हैं। ये यक्ष भी हैं जिन्हे आमतौर पर छोटे मोटे रूप में ही चित्रित किया जाता है। ईशान को शिव का रूप कहा गया है। ये उत्तर–पूर्व दिशा के संरक्षक है।[19]

अष्ट दिक्पाल जो हमारे जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं एवं हमारे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। यदि हम इन आठों दिशाओं को ध्यान में रखकर अपनी दिनचर्या की शुरूआत करते हैं तो ये अष्ट दिक्पाल नकारात्मक प्रभाव से हमारी रक्षा करते हैं। क्योंकि प्रत्येक दिशा के स्वामी अपना कार्य सही तरीके से करते हैं परन्तु यदि मनुष्य गलत दिशा में वस्तुओं को रखता है या विपरीत दिशा में सर रखकर सोता है या पढ़ाई करता है तो इसके परिणाम सकारात्मक होने के बजाय नकारात्मक नजर आने लगते हैं। इसीलिए प्रत्येक कार्य दिशाओं को ध्यान में रखकर ही करने चाहिए। इनका हमारे जीवन से अटूट सम्बन्ध होता है जिसका प्रभाव हमें कभी–कभी महसूस भी होता है। जब भी पूजन करें तो अष्ट दिक्पाल का स्मरण भी आवश्यक है।

संदर्भित ग्रन्थ सूची

(1) अग्रवाल वासुदेव शरणः भारतीय लोकधर्म इन्द्र मह पृ0–28–42
(2) विष्णु धर्मोत्तर पुराण तीन, 50. 2–5, मत्स्य 259.66–69
(3) Bulletin of the prince of wales Musum Bombay, No.-1, PP. 15-21 fig.6
(4) Louis, Fredrice: Indain Temples and sculptures, London 1959,Pl.152
(5) महाभारत, हरिवंश, हरिवंश पर्व, 547, पृ0–203
(6) विष्णु धर्मोत्तर पुराण–तीन 51–7–14, वृहत्संहिता, 57–57।
(7) विष्णु धर्मोत्तर पुराण तीन, 57.1–5, मत्स्य , 260.16 ।
(8) महाभारत, हरिवंश, हरिवंश पर्व 34–29, पृ0–244
(9) वाल्मीकि रामायण, उत्तर0, 13,30, पृ0–1488 (गीता प्रेस)
(10) DHI, 1956, Ed. P-338
(11) ललित विस्तर, 8, पृ0–84
(12) awandringmind.in
(13) https.//www.awanderingmind.in